International Journal of Humanities and Social Science Invention
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 6 Issue 8||August. 2017 || PP.98-102

हिंदी साहित्य में व्यंग्य विधा के अधुनातन स्वरूप एवं विकास में रचनाकारों का योगदान

भगवाना राम बिश्नोई
सह आचार्य हिन्दी राजकीय महाविद्यालय सिरोही राजस्थान

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश की बिगड़ती हुई स्थिति तथा बढ़ती हुई विसंगतियों ने व्यंग्य रचना के लिए पूर्व की अपेक्षा और भी अधिक उर्वरा भूमि प्रदान की, जिसके फलस्वरूप व्यंग्य और भी शक्तिशाली तथा प्रभावकारी रूप में सामने आया। स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य लेखक की अनेक विलक्षणताओं में एक विशिष्ट विलक्षणता यह रही है कि हास्य औरव्यंग्य का पार्थक्य स्पष्ट हुआ। अब तक हिन्दी का आलोचक इन दोनों ही विधाओं को स्वतन्त्र साहित्यिक विधाओं के रूप में स्वीकार करने के स्थान पर मिले–जुले रूप में स्वीकार कर हास्य–व्यंग्य की संज्ञा प्रदान करता था। परन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात्, बल्कि सन् 1960 के पश्चात् व्यंग्य–लेखन के प्रभाव उसकी समसामयिकता, प्रासंगिकता तथा सोद्देश्यता को देख कर समीक्षकों की दृष्टि उसे एक स्वतन्त्र साहित्यिक गद्यविधा के रूप में पहली बार मान्यता प्रदान कर सकी। स्वातन्त्र्योत्तर गद्य की सर्वाधिक सशक्त और उल्लेखनीय विधा के रूप में व्यंग्य की प्रतिष्ठा एक बहुत बड़ी घटना है। हिन्दी के आधुनिक लेखन ने जहाँ विविध रूप शैलियों के विकासशील होने के कारण अपने वैशिष्ट्य की ओर आकर्षित किया है, वहीं व्यंग्य ने अपना निश्छल चरित्र प्रस्तुत किया है।

भारतेन्दु तथा उनके समकालीन साहित्यकारों ने व्यंग्य–लेखन की जो परम्परा चलायी, उसका स्वरूप मुख्यतः सुधारवादी और आदर्शपरक था। तब से अब तक हिन्दी के व्यंग्य लेखन ने दीर्घ यात्रा पूर्ण की है। परन्तु आज के व्यंग्य लेखन का स्वरूप, उसका चरित्र और प्रस्तुतीकरण आमूलचूल परिवर्तित हो चुका है। हिन्दी का स्वातन्त्र्योत्तर व्यंग्य अनुभूति की जिन गहराइयों और अन्तर्विरोधों के जिस संघर्ष से जन्मा है, अतीत का व्यंग्य–लेखन उसके सामने परिहास मात्र दिखायी पड़ता है। वर्तमान स्थिति में न तो किसी भी समीक्षक का यह विचार कि हिन्दी में स्तरीय व्यंग्य का अभाव है, यह स्वीकार किया जा सकता है और न हिन्दी के हास्य व्यंग्य साहित्य को 'फुटकर खाते' में डाले जाने योग्य साहित्य समझकर उसकी उपेक्षा ही की जा सकती है। प्रत्युत आज का हिन्दी–व्यंग्य अधिक तीक्ष्ण, समर्थ, गम्भीर एवं सोद्देश्य स्वतन्त्र साहित्यिक गद्य विधा है।

स्वातन्त्र्योत्तर व्यंग्य–लेखन की प्रवृत्तियों ने यह सुस्पष्ट कर दिया है कि हास्य अलग तत्व है और व्यंग्य सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों ही दृष्टियों से उससे भिन्न रूप है। विगत दो दशाब्दियों में लिखे गये हिन्दी व्यंग्य लेखन ने व्यंग्य को साहित्य की लेखन–शैली से उठाकर स्वतन्त्र विधा के रूप में प्रतिष्ठित किया है। जब किसी विशेष शिल्प एवं प्रविधि की रचनाएँ पर्याप्त संख्या में लिखी जाने लगती हैं एवं उस पर किसी विशिष्ट लेखन के स्थान पर साहित्य की परम्परा का आधिपत्य हो जाता है, तब उक्ति, शिल्प, प्रविधि को स्वतन्त्र विधा के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है। नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, आत्मकथा, जीवनी आदि साहित्यिक विधाओं के स्थापित होने की यही प्रक्रिया रही है। अपने समसामयिक परिवेश में व्याप्त असंगतियों–विसंगतियों, अर्न्तविरोधों, दुराचारों को अणुवीक्ष्य यंत्र से देखने और उन्हें ध्वस्त करने का साहस रखने वाले व्यंग्यकारों ने स्वातन्त्र्योत्तर व्यंग्य लेखन को स्वतन्त्र विधा का स्वरूप प्रदान किया है। व्यंग्य को सर्वप्रथम उपयुक्त आसन पर प्रतिष्ठित कर उसे महत्ता प्रदान की है।

व्यंग्य लेखन के रूप में जिस रूप का प्रस्तुतीकरण आधुनिक व्यंग्यकारों ने किया है उसे न निबन्ध की कोटि में रखा जा सकता है और न कहानी की श्रेणी में ही। उर्दू में गद्य के उसी शिल्प को 'फकाहिया' का अभिधान मिला है। स्वातन्त्र्योत्तर काल के व्यंग्यकारों ने उसी रूप–शिल्प को व्यापकता के साथ ग्रहण कर अपनी लेखनी चलायी है।

उस दृष्टि से व्यंग्य को सर्वथा एक नवीन साहित्यिक गद्य विधा के रूप में स्वीकार करने में कोई अड़चन नहीं होनी चाहिए। स्वतन्त्र विधा के रूप में व्यंग्य की प्रतिष्ठा इसलिए भी एक अनिवार्यता बन गयी कि स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय परिवेश की विसंगतियों ने व्यापक स्तर पर रचनाकारों को व्यंग्य–लेखन के लिए आकर्षित और प्रेरित किया।

व्यंग्य को परवान चढ़ाने और सही संरक्षण देने योग्य वातावरण का निर्माण देश की आजादी के तुरन्त बाद ही हुआ। कारण, स्वतन्त्रता से पूर्व भारतवासियों ने स्वतन्त्र भारत के जो सपने सँजोये थे, स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् वे सभी बहुत तेजी से खण्डित और ध्वस्त हो गये। चारों ओर विसंगतियाँ मुँह बाये खड़ी दिखायी देने लगीं। नयी विचारधाराओं और लद रही मान्यताओं के बीच के अर्न्तविरोधों ने नवीन व्यंग्य रचनाओं के लिए नये–नये गवाक्ष खोले।

प्रचार सत्य और वस्तु सत्य के बीच के अन्तर्विरोध भी व्यंग्य विधा में सबसे अधिक खुलकर सामने आये। धीरे–धीरे जीवन और साहित्य में व्यंग्य की उपयोगिता को स्वीकृति मिली और स्थिति यहाँ तक आ गयी कि देशभर की

सुप्रसिद्ध एवं स्तरीय पत्र–पत्रिकाओं में भी स्थायी स्तम्भ के रूप में व्यंग्य को प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। आज शायद ही कोई पत्र–पत्रिका ऐसी हो जिसमें दो–चार व्यंग्य लेख नियमित रूप से प्रकाशित न होते हों। दूसरी तरफ व्यंग्यकारों की सुदीर्घ परम्परा दिखायी देने लगी। आज हिन्दी में सौ से अधिक व्यंग्यकार हैं, जिनकी लेखनी समकालीन परिवेश और विसंगतियों का पर्दाफाश कर तीक्ष्ण प्रहार करने के निमित्त निरन्तर क्रियाशील हैं।

स्वातन्त्र्योत्तर काल में व्यंग्य को स्वतन्त्र विधा के रूप में प्रतिष्ठा प्रदान कराने वाले व्यंग्यकारों में हरिशंकर परसाई एवं शरद जोशी प्रथम पंक्ति के व्यंग्यकार हैं। जोशी जी ने अपनी रचनाधर्मिता से व्यंग्य को स्वतन्त्र व्यक्तित्व प्रदान कर साहित्य की अन्य विधाओं के समकक्ष उठाने और खड़ा होने का बल प्रदान किया है। जोशी जी के व्यंग्य का क्षेत्र भी अत्यन्त विस्तृत और व्यापक है। विभिन्न राजनीतिक, आर्थिक, साहित्यिक, विसंगतियों की उन्होंने खुलकर बखिया उधेड़ी है। हिन्दी व्यंग्य को सजाने–सँवारने और प्रतिष्ठा प्रदान कराने वालों में रवीन्द्रनाथ त्यागी का नाम भी उल्लेखनीय है। किसी व्यक्ति अथवा घटना पर व्यंग्य करते समय उनका रूख जराई की तरह नहीं होता, अपितु उसमें एक संवेदनशील और सहानुभूति पूर्ण हृदय स्पन्दित रहता है। 'जिन लोगों ने व्यंग्य को स्वतन्त्र प्रतिष्ठा देने दिलाने की दशा में काम किया है उनमें रवीन्द्रनाथ त्यागी का अपना अलग रंग है।'

व्यंग्य को पुरानेपन से मुक्त कर उसे आधुनिक जीवन बोध से संयुक्त कराने वालों में केशव चन्द्र वर्मा का विशिष्ट एवं उल्लेखनीय स्थान है। आज के नेताओं पर उनका व्यंग्य कितना सटीक है–''समस्या का उत्पादन नेता के लिए संजीवनी बूटी है, जो नेता समस्या नहीं उठा पाता, वह मर जाता है। उसकी नेतागीरी समाप्त हो जाती है, उसे सब काहिल और बेकार समझने लगते हैं।''

श्रीलाल शुक्ल भी इस परम्परा की महत्वपूर्ण कड़ी हैं। 'राग दरबारी' जैसे विशिष्ट व्यंग्य उपन्यास की रचना करने के साथ ही उन्होंने अपनी विशेष शैली द्वारा हिन्दी व्यंग्य को अभिनव आयाम दिये हैं।

डॉ0 नरेन्द्र कोहली ने भी व्यंग्य की समग्रता को पूरी निष्ठा और गम्भीरता के साथ अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया है। उनकी रचनाओं में हमारा आज का परिवेश अपने सम्पूर्ण यथार्थ के साथ मुखरित हुआ है। डॉ0 कोहली की मान्यता है कि भारत का स्वातन्त्र्योत्तर सामाजिक, राजनीतिक चरित्र इस सीमा तक विगलित हो चुका है कि अब केवल उसे परिश्कृत करने के लिए व्यंग्यात्मक चर्चा ही हो सकती है।

स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय परिवेश का व्यंग्यमय चित्र उतारने वालों में सुदर्शन मजीठिया का भी उल्लेखनीय योगदान है। इनके व्यंग्य का क्षेत्र भी अन्य रचनाकारों के समान अत्यन्त विस्तृत और व्यापक है।

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य लेखन की परम्परा यहीं समाप्त नहीं हो जाती, अपितु इसका अबाध प्रवाह हिन्दी व्यंग्य की धारा को निरंतर सुविकसित कर रहा है। डॉ0 बरसाने लाल चतुर्वेदी, सुबोध कुमार श्रीवास्तव, विनोद शर्मा, प्रदीप पंत, डॉ0 शंकर पुणतांबेकर, अमृतराय, फिक्रतोसबी, सन्तोष खरे, श्रीकान्त चौधरी, के0पी0 सक्सेना, अशोक शुक्ला, अजातशत्रु, लक्ष्मीकान्त वैश्णव जैसे न जाने कितने व्यंग्य लेखकइस विधा को आगे बढ़ाने में प्रयासरत हैं। इन रचनाकारों की अनगिनत व्यंग्य रचनाएँ देशभर की अनेकानेक पत्र–पत्रिकाओं में नित्यप्रति प्रकाशित हो रही हैं। कहना असंगत न होगा कि वर्तमान समय में हिन्दी–व्यंग्य हिन्दी–साहित्य की दूसरी विधाओं की तुलना में सबसे अधिक व्यापक प्रभावकारी, समाजधर्मी साहित्यिक विधा है। इस विधा में हमारे आज के जीवन का सम्पूर्ण परिवेश उजागर हुआ है, जीवन का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं है, जहाँ इन व्यंग्यकारों की प्रखर दृष्टि न पड़ी हो और जिसे उन्होंने अपने व्यंग्य का लक्ष्य न बनाया हो।

व्यंग्य विधा के प्रति आलोचकों की दृष्टि–

जहाँ स्वातन्त्र्योत्तर काल में हिन्दी साहित्य में व्यंग्य को प्रमुखता प्राप्त हुई, वहीं एक ऐसे वर्ग का भी उदय हुआ जो व्यंग्य को एक स्वतन्त्र विधा मानने लगा। लेकिन दूसरी ओर ऐसा भी एक वर्ग था, जो उसे विधा मानने में आपत्ति करने लगा। हालांकि प्रत्येक रचनाकार की यह कोशिश होती है कि वह नई बात, नई शक्ति से, नये तथ्य से, नयी शैली में, नयी जमीन की तलाश करें। फलस्वरूप चिरपरिचित विधाओं को तिलांजलि और नूतन विधाओं की ललकपूर्ण खोज बनती है। व्यंग्य की जमीन, उसका फैलाव, आवश्यकता, महत्व, स्वरूप, विधा निर्णयन के तत्व को देखने से किसी को आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि व्यंग्य एक विधा है और विधा रूप में उसका नव्यता की खोज का एक समर्थ प्रस्थान–बिन्दु है। यह बड़े अचरज की बात है कि व्यंग्य को विधा के रूप में पाश्चात्य देशों में साहित्य की पचासवीं सदी से पूर्व मान्यता प्राप्त हो चुकी है, जबकि हमारे यहाँ आज भी वह विवाद का विषय बना हुआ है।

व्यंग्य को विधा के रूप में अस्वीकार करने वालों के नाम हैं– सर्वश्री हरिशंकर परसाई, के0पी. सक्सेना, डॉ0 शेरजंग गर्ग, सुबोध कुमार श्रीवास्तव, किरीट भट्ट आदि। जबकि व्यंग्य को विधा के रूप में मान्यता देने वालों की सूची बहुत लम्बी हैं जैसे– रवीन्द्रनाथ त्यागी, शंकर पुणतांबेकर, डॉ0 चन्द्रशेखर रेड्डी, भानुदेव शुक्ल, डॉ0 बालेन्दु शेखर तिवारी, डॉ0 प्रेमजनमेजय, श्रीकांत चौधरी, सीतेश आलोक, निशिकांत, डॉ0 सरोजनी प्रीतम, रत्नाकर पाण्डेय, सूर्यप्रसाद दीक्षित, डॉ0 नरेन्द्र कोहली, डॉ0 प्रभाकर श्रोत्रिय, विजय शुक्ल, डॉ0 ष्याम सुन्दर घोश, कन्हैया लाल नंदन, शरद जोशी,

सूर्यबाला, राही मासूम रजा, धर्मवीर भारती, महावीर अधिकारी, सुधा जैन, शांता रानी, शशि मिश्र, डॉ0 बापूराव देसाई आदि।

अब सारे परिवेश तथा व्यंग्य साहित्य को देखकर यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि हिन्दी में व्यंग्य विधा है, जो नहीं मानते वे इससे अपरिचित हैं। व्यंग्य को विधा माना जाए या न माना जाए इससे क्या? व्यंग्य की धार, कार्यशैली, प्रभाव, तेज पर तो कोई असर नहीं पड़ता है। यदि साहित्य समाज का दर्पण है तो व्यंग्य दर्पण के रूप में सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है।

समाज एवं जीवन के अनेक पक्षों की पड़ताल करने वाला व्यंग्य स्वयं सारी सीमाओं को नकारता है। साहित्य की पद्य और गद्य नामक दोनों शक्ति–धाराओं में व्यंग्य स्वयं सारी सीमाओं को नकारता है। आवश्यकता के अनुसार व्यंग्य ने गद्य की अनेक विधाओं को अपना माध्यम बनाया। निबन्ध, कहानी, नाटक और उपन्यास के दायरों में व्यंग्य भारतीय राजनीति, समाज, अर्थ, धर्म, प्रशासन, शिक्षा व साहित्य के अनेक प्रकट–अप्रकट, चर्चित–अचर्चित क्रिया–व्यापारों व प्रसंगों की पड़ताल करता हुआ दिखायी देता है।

व्यंग्य हमारे सामाजिक जीवन का सजग प्रहरी है। व्यंग्य सामाजिक–आचरण का उद्घाटन है। अतः व्यंग्य में समाज रूपायित होता है। स्वातन्त्र्योत्तर गद्य–व्यंग्य के संदर्भ में तो यह बात सटीक है। स्वतन्त्रता पूर्व की परिस्थितियों से आज की स्थितियाँ भिन्न हैं। अतः व्यंग्य की विषयवस्तु भी तद्युगीन व्यंग्य से भिन्न है। डॉ0 बालेन्दु शेखर तिवारी इसे रेखांकित करते हुए लिखते हैं–''आज काव्यंग्य अनुभूति की जिन गहराइयों और अन्तर्विरोधों के जिस संघर्ष से जन्मा है, बीता हुआ व्यंग्य लेखन उसके सामने परिहास मात्र है।''

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी–गद्य–व्यंग्य–साहित्य सामाजिक यथार्थ की आक्रोशमयी अभिव्यक्ति है। 20वीं शताब्दी के साहित्य में उत्तरोत्तर यथार्थ का आग्रह बढ़ा है। स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं में अपनी कलात्मकता के साथ यह सत्य उद्घाटित हुआ है। व्यंग्य–साहित्य में रचनाकारों ने अधिक आजादी के साथ समाज की सच्चाईयों को अभिव्यक्ति दी है। व्यंग्यकारों ने जहाँ एक ओर साहित्य की प्रचलित विधाओं में अपनी बात कही है तो वहाँ दूसरी ओर उनकी दृष्टि अपनी व्यापकता में व्यक्ति और समाज के प्रायः अधिकांश पक्षों की विवेचना करती है। डॉ0 बालेन्दु शेखर तिवारी व्यंग्य की उस व्यापकता पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं–''हिन्दी व्यंग्य की कहानी आक्रोश, परिवर्तन–कामिता और यथार्थ के साक्षात्कार की गाथा है। व्यंग्य की सप्राणता ने ही धीरे–धीरे ऐसी स्थिति बनाई है कि अधिकांश समकालीन ईमानदार साहित्य मूलतः व्यंग्य प्रधान ही है। कविता और गद्य की विविध विधाओं में फैलती हुई व्यंग्य चेतना ने व्यंग्य विधा के स्वरूप एवं विकास के बारे में सजग चिन्तन को विकसित किया है।'' हास्य के साथ युति के कारण हिन्दी–व्यंग्य सदा उपेक्षित रहा। स्वाधीनता के बाद व्यंग्य ने हास्य से अपने पार्थक्य के अनेक प्रमाण दिये हैं। व्यंग्य, हास्य की तरह मनोविनोद का कारक नहीं रहा। साहित्य की एक महत्वपूर्ण भाव–धारा के रूप में उसने अपनी स्वायत्तता स्थापित कर ली है और अपनी युगीन समस्याओं के यथार्थ को कुशलतापूर्वक अभिव्यक्ति दी है।

हिन्दी कविता में व्यंग्य की प्रवृत्ति प्रारम्भ से ही रही है। कबीर जैसे सशक्त व्यंग्यकार भक्तिकाल और निराला जैसे व्यंग्यकार आधुनिक–काल के व्यंग्य कवियों के पितृ–पुरुषों के रूप में समादृत हैं। देश की आजादी के बाद हिन्दी–कविता के क्षेत्र में परिवर्तन हुए हैं। डॉ0 शिवप्रसाद सिंह लिखते हैं– ''सन् साठ के बाद से कविता के क्षेत्र में बहुत अंतर पाया है। खास तौर से भाषा और अभिव्यक्ति की दृष्टि से।'' विसंगतियों के अनेक आयामों ने कवियों को शृंगार में गोता लगाने या छायावादी–रहस्यवादी घेरों को भेदने के उपक्रमों से बाहर निकालकर युग पीड़ा में निमज्जित कराया। तभी तो धूमिल जैसे कवि कह उठते हैं–

''मेरी निगाह में न कोई छोटा है, न बड़ा है

मेरे लिए हर आदमी एक जोड़ी जूता है,

जो मेरे सामने मरम्मत के लिए खड़ा है।''

परिवर्तित परिस्थितियों ने विडम्बनाओं का ऐसा चक्रव्यूह खड़ा कर दिया है कि आदमी उस मकड़जाल से बाहर निकलने को छटपटा रहा है– ऐसी स्थिति में व्यंग्य ही रचा जा सकता है, बिहारी सतसई नहीं।

शंकर पुणताम्बेकर मानते हैं कि 'व्यंग्य की धार में अत्यधिक पैनापन आया सन् 1960 के पश्चात्। यह इसलिए कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के कुछ ही वर्षों के पश्चात् जनमानस जिस मोह–भंग की स्थिति से गुजर रहा था, वह अब जैसे पराकाष्ठा को पहुँच चुकी थी।' मोहभंग की पराकाष्ठा की अभिव्यक्ति है हिन्दी की व्यंग्य कविता। स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य कवियों में बाबा नागार्जुन, डॉ0 प्रभाकर माचवे, केशवचन्द्र वर्मा, दिनकर सोनवलकर, डॉ0 भारतभूषण अग्रवाल, रवीन्द्र राजहंस, मालीराम शर्मा, ष्याम सुन्दर घोश, माणिक वर्मा, सुरेन्द्र तिवारी, डॉ0 विनोद गोदरे, डॉ0 सरोजनी प्रीतम, डॉ0 बालेन्दु शेखर तिवारी, अरुण रंजन, अशोक चक्रधर, मधुप पाण्डेय, कान्त चौधरी, सुरेश उपाध्याय, प्रदीप चौबे, बटुक

चतुर्वेदी, सूर्यभान गुप्त तथा रामनिवास शर्मा 'मयंक' आदि कवियों के नाम उल्लेखनीय हैं। पुरानी पीढ़ी के अनेक कवियों ने भी अपनी रचनाओं में व्यंग्य को स्थान दिया है।

स्वाधीनता के पश्चात् की हिन्दी–व्यंग्य की काव्य–यात्रा को स्पष्ट करने के लिए डॉ0 बरसाने लाल चतुर्वेदी के मत का उल्लेख यहाँ समीचीन होगा–''व्यंग्य साहित्य ने शिल्प की दृष्टि से नये क्षितिज छुये हैं। भाषा में निखार आया है। आलम्बन बदले हैं। व्यंग्य काव्य की प्रभावोत्पादकता में भी बृद्धि हुई हैं।'' हिन्दी कवियों की नई पीढ़ी तो व्यंग्य कविता के प्रति आग्रहशील है ही।

व्यंग्य ने उपन्यासों के परम्परागत शास्त्रीय ढाँचे पर भी प्रश्न चिन्ह खड़े किये हैं। डॉ0 बालेन्दु शेखर तिवारी लिखते हैं–''हिन्दी का सुधी–समीक्षक समुदाय यह मानने को तैयार है कि हिन्दी में उपन्यास–लेखन के प्रारम्भिक सूत्र सूफी–फकीरों के कथा–काव्य में विद्यमान हैं। लेकिन उसकी अन्तरात्मा यह नहीं स्वीकार करसकती कि हिन्दी में उपन्यासों की एक श्रेणी हास्य और व्यंग्य से जुड़ी हुई भी है।

उसने पूरी सतर्कता के साथ उपन्यास के पौराणिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक जैसे रूप भेदों को स्वीकृति दे रखी है, परन्तु व्यंग्य विनियोग से समन्वित उपन्यासों का अलग विभाग मानने की बात अब तक उनके हलक से नीचे नहीं उतरी है।''

स्वाधीनता के पश्चात् सन् साठ तक तो व्यंग्य उपन्यास के क्षेत्र में भी मंथर गति रही। सन् साठ के बाद ही व्यंग्य का कार्यक्षेत्र विस्तृत हुआ। डॉ0 बरसानेलाल चतुर्वेदी का मत है कि आज उसकी ;व्यंग्यकारद्ध दृष्टि सूक्ष्मतर हो गई है, उसका क्षेत्र व्यापक हो गया है, उसका व्यंग्य पहले से अधिक व्यापक हो गया है।

हिन्दी का अधिकांश व्यंग्य–साहित्य निबन्ध में ही रचा गया है। हिन्दी–व्यंग्यकार निबन्ध के भेदोपभेदों के झंझट में नहीं पड़ता। डॉ0 ऊशा शर्मा लिखती हैं– व्यंग्य निबन्धकार, अनिबन्ध, नया निबन्ध, निबन्ध विहीन निबन्ध, निबन्ध के शिल्प और अशिल्प के झंझटों से मुक्त है। वह अपने शिल्प, शैली और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए स्वतन्त्र है। आज भी वह पाठक के समक्ष विषुद्ध व्यंग्य निबन्धकार के रूप में खड़ा है।

हिन्दी व्यंग्यकार की दृष्टि में विधा के बदले व्यंग्य ही बसा है, इसीलिए वह निबन्ध नामकरण के विवादों से दूर रहा है। व्यंग्य निबन्ध की कार्य पद्धति को स्पष्ट करते हुए डॉ0 शेरजंग गर्ग लिखते हैं–''व्यंग्य निबन्ध को व्यंग्य की रम्य रचना की संज्ञा दी जा सकती है। यह निबन्ध यद्यपि किसी एक विषय से पूर्णतः बंधा होता है, मगर इस सम्बन्ध में स्वच्छन्दता का उपयोग करता हुआ व्यंग्यकार उसे अपने मनचाहे बंधन में ही बांधता है। यही कारण है कि इसका विकास उत्फुल्लता के साथ ही विसंगतियों को वर्णित भी करता है।''

हिन्दी–निबन्ध में व्यंग्य विषयों का जितना विस्तार है, उतना अन्य विधाओं में नहीं। मृत्यु के बाद होने वाली शोक–सभा और ष्मशान की यात्रा में व्यक्ति और उसकी मनोदशा की विसंगतियाँ तक व्यंग्य–निबन्ध का विषय बनी हैं। साहित्य, समाज, शिक्षा, राजनीति, धर्म, अर्थ आदि के विविध पक्षों और उनकी विसंगतियों को व्यंग्य का विषय बनाया गया है।

हिन्दी व्यंग्य–निबन्ध और व्यंग्य–कथा की विभाजक रेखा भी क्षीण हो रही है। व्यंग्य निबन्ध को कथा शैली में लिखने का प्रचलन भी बढ़ा है। निबन्ध यद्यपि कथा–कहानी के कलेवर में नहीं समा पाते, तथापि कतिपय निबन्धों को लगभग कथा–कहानी की शैली में लिखने का प्रयत्न होता है। कहानी की किस्सागोई के मुकावले व्यंग्य निबन्धों में चर्चित विषयों को ही आगे बढ़ाकर धीरे–धीरे उनकी विसंगतियों को शरारतपूर्ण सहसंयोजन के माध्यम से पेश किया जाता है। इसका कारण है कि व्यंग्यकार अपने लक्ष्य पर दृष्टि रखता है, विधा की शास्त्रीय मर्यादाओं पर नहीं। व्यंग्यकार निबन्ध में ही कहीं कथोपकथन द्वारा नाटकीयता का आभास कराते हैं, तो कहीं उपन्यास की वर्णनशैली का प्रयोग भी मिलता है। कहीं कहानी सी उत्सुकता है, तो कहीं संस्मरण या रेखाचित्र की प्रतीति भी।

हिन्दी व्यंग्य ने विधाओं की शास्त्रीय मर्यादाओं का उल्लंघन किया है, उसके परम्परागत स्वरूप को नकारा है। इसका स्पष्टीकरण देते हुए रामनारायण उपाध्याय लिखते हैं–''अपनी बात कहने के लिए मैंने ललित निबन्ध, रूपक, रिपोर्ताज जैसी विविध विधाओं का भी प्रयोग किया है। मेरी मान्यता है कि जैसे वृक्ष की एक डाली, खिलने के कितने आयाम दे जाती है, पत्तों के, फूलों के, फलों के। ऐसे ही एक अच्छा विचार लिखने की कितनी विधाऐं दे जाता है–निबन्ध की, काव्य की, कथाओं की।'' हिन्दी गद्य–व्यंग्यकारों ने व्यंग्य सृजन के लिए समानान्तर कई विधाओं को स्वीकार किया है। हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, केशव चन्द्र वर्मा, सुदर्शन मजीठिया, डॉ0 नरेन्द्र कोहली,रवीन्द्रनाथ त्यागी आदि व्यंग्यकारों की रचनाओं में ऐसी ही विधागत विविधता दिखाई देती है। व्यंग्यकारों ने निबन्ध, कहानी, नाटक, उपन्यास के अतिरिक्त संस्मरण, रिपोर्ताज, डायरी, साक्षात्कार आदि अनेक विधाओं के प्रयोग अपनी रचनाओं में किये हैं।

लघु व्यंग्य का उदय स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी–गद्य–व्यंग्य की विकास–यात्रा का एक महत्वपूर्ण बिन्दु है। गति की तीव्रता के कारण व्यक्ति की अधीरता भी बढ़ी है। अब पाठक और लेखक में लम्बी रचनाओं के आस्वादन का धीरज नहीं

रहा। संक्षिप्त में कह देने का आग्रह बढ़ रहा है। इसी से लघु व्यंग्य का उदय हुआ है। लघु व्यंग्य के समानांतर लघु–कथा, लघु कहानी, चुटकुला आदि अनेक साहित्य रूपों का प्रचलन हुआ है। इन्हें लघु व्यंग्य के पर्याय मानने का भ्रम भी विकसित हुआ। इन साहित्य रूपों से व्यंग्य के पार्थक्य और व्यंग्यके मूल चरित्र पर प्रकाश डालते हुए डॉ0 बालेन्दु शेखर तिवारी लिखते हैं–''यह गलतफहमी लगातार उपजती रही है कि व्यंग्य प्रधान छोटी रचनाओं को भी लघु कथा मान लिया जाये।

व्यंग्य ने जिस तीव्रता और कौशल के साथ अपने आपको निबन्ध और कहानी के परम्परागत संसर्ग से मुक्त कर लिया है, उतनी ही तसल्ली और तेजी के साथ लघु व्यंग्य को लघु कथा से अपने को मुक्त करना होगा। अब इस घिसी हुई मानसिकता में कोई दम नहीं रह गया है कि तमाम छोटी गद्य रचनाओं के लिए लघु–कथा ही इकलौता अभियान है। व्यंग्य विधा की लघुतर संरचना का नाम है लघु व्यंग्य। अनुभव और अभिव्यक्ति, संवेदना और संप्रेशण, रूप और लक्ष्य किसी भी दृष्टि से लघु व्यंग्य का कोई तादात्म्य लघु कथा के साथ नहीं है।

इस नाते व्यंग्य कर्म की जमीन पर तैयार सभी लघु कथाओं को अब लघु व्यंग्य मान लेने के सिवाय दूसरा विकल्प नहीं है।'' कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि रचनाकारों ने व्यंग्य का प्रयोग किया है। व्यंग्य लिखने वाले रचनाकारों के अतिरिक्त स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी की अन्य साहित्यिक रचनाओं में भी व्यंग्य की उपस्थिति को सहज ही रेखांकित किया जा सकता है।

'नई कहानी' और उसके बाद के रचनाकारों में तो व्यंग्य ही उनकी शक्ति का स्रोत रहा है। भीष्म साहनी, अमरकांत व ज्ञानरंजन से लेकर नवें दशक के रचनाकार इन्द्रमणि उपाध्याय तक व्यंग्य की धार का यह प्रवाह देखा जा सकता है। आलोचकों ने भी व्यंग्य के द्वारा अपनी आलोचना पद्धति का शृंगार किया है।

सन्दर्भ

1. विनीता निर्झर : सुलभ इण्डिया, अप्रैल 1987, पृ0 17
2. गिरिराज शरण 'गुंजन' साठोत्तरी हिन्दी नाटक, पृ0 47
3. मुखर्जी, रवीन्द्र नाथःउच्चतर समाजशास्त्रीय सिद्धान्तः पृ0 515
4. गुप्त, जगदीश : नयी कविता : स्वरूप और समसयाएँ, पृ0 214
5. पाण्डेय, रामखेलावन : 'हिन्दी साहित्य कोश' भाग–एक, पृ0 805
6. शर्मा, ऊशा : स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी निबन्ध साहित्य में व्यंग्य, पृ0 79
7. वीणा–नम्बर, 1937, पृ0 33 ;नगेन्द्र के लेख में उद्धृतद्ध.
8. रत्नाकर, जगन्नाथ दास;सम्पादकद्ध : बिहारी रत्नाकर, पृ0सं0 63
9. उपाध्याय, मांगी लाल : व्यंग्य और भारतेन्दु युगीन गद्य, पृ0सं0 177
10. भारतेन्दु ग्रंथावली : अंधेर नगरी, पृ0सं0 170
11. सिंह, राजकिशोर,एवं यादव ऊशाः हिन्दी के प्रतिनिधि निबन्धकार, पृ0सं0 45
12. संसारचंद;सम्पादकद्धः हिन्दी हास्य–व्यंग्य निबन्धः रूपयात्रा, पृ0 123
13. मदान, इन्द्रनाथ : हिन्दी की हास्य व्यंग्य विधा का स्वरूप और विकास, पृ0 42
14. चतुर्वेदी, श्रीप्रकाश ;सम्पादकद्ध, बरसाने लाल चतुर्वेदीः अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ0 42
15. घोष, श्यामसुन्दर ;सम्पादकद्धः 'व्यंग्य क्याः व्यंग्य क्यों', पृ0 67
16. तिवारी, बालेन्दु शेखर : व्यंग्य ही व्यंग्य, पुरोवाक्, पृ0 5
17. चतुर्वेदी, बरसाने लाल : 'आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य', पृ0 162
18. तिवारी, बालेन्दु शेखर :'हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान', पृ0 76
19. चतुर्वेदी, बरसाने लाल : आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य, पृ0 77
20. शर्मा, ऊषा : स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी निबन्ध साहित्य में व्यंग्य, पृ0 105